ISSN 2348-5639

शोध समालोचन (त्रैमासिक)

SHODH SAMALOCHAN

42

वर्ष : 1 सितम्बर, 2014 अंक : 3

A Peer Reviewed Bilingual International Journal Of Multi-Disciplinary Research

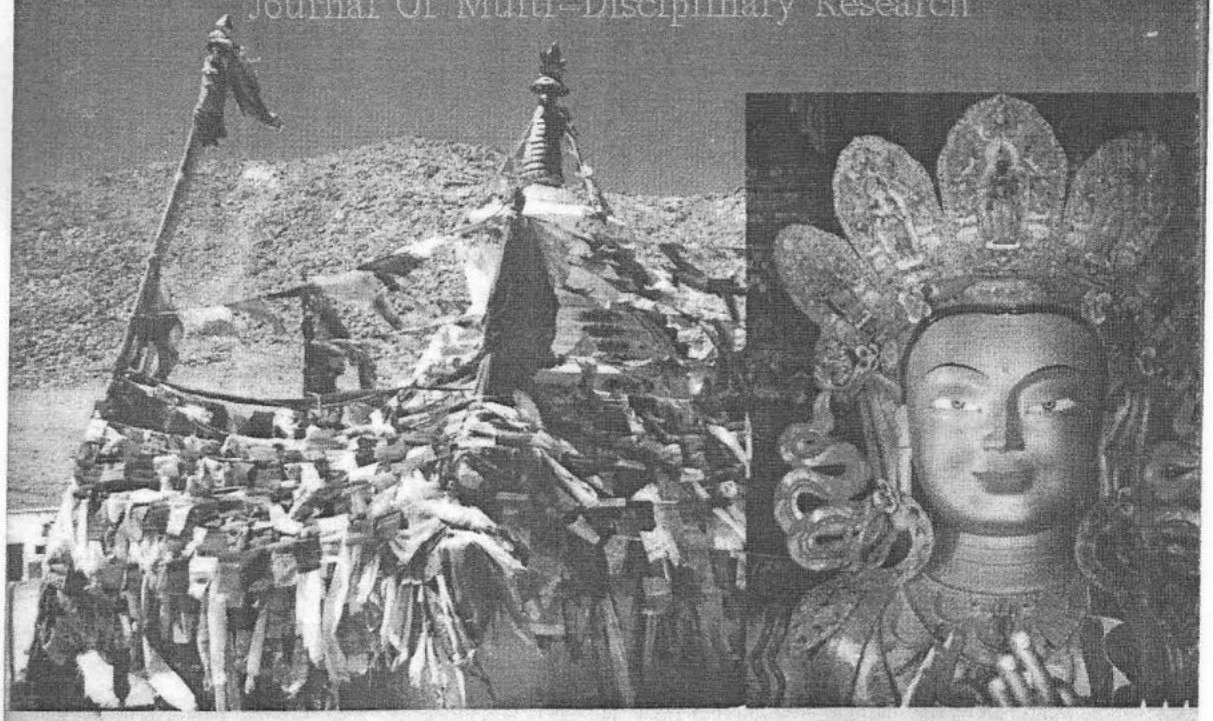

- बुद्धकालीन लोकधर्म
- संस्कृत वांङ्मय में पारंपरिक.....
- देवताओं में.....
- Oil : The Neglected.....
- Medicine, Health.....
- Effective Parenting For.....

एवं 17 अन्य शोधालेख

संपादक : डॉ. भारतेन्दु मिश्र/डॉ. बलराम अग्रवाल

Page no. 76 to 84

भारतीय समाज का विकास : दार्शनिक एवं ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

डॉ. किशोर कुमार
सहायक प्रोफेसर, इतिहास विभाग
कु. मायावती राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बादलपुर, गौतमबुद्ध नगर (उ.प्र.)

भारत की सामाजिक संरचना युगों से विविधताओं से समृद्ध एवं जटिल है। भारतीय समाज में विविधता और एकता एक साथ दिखाई देती है। यहां अनेक धर्म और जातियों के लोग अपनी प्रथाओं, विश्वास एवं परपंराओं के साथ अपना-अपना सांस्कृतिक अस्तित्व स्थापित करते रहे हैं। भारतीय समाज में प्राचीनकाल से ही विभिन्न प्रजातीय तत्व मिश्रित रूप में पाए जाते हैं। इस विविधता ने अनेक विद्वानों को भ्रमित किया है। यह आशय दशकों पूर्व विंस्टन चर्चिल के इस कथन में झलकता है, "भारत वास्तव में उतना ही एक देश है, जितनी वास्तविकता भूमध्य रेखा की कल्पना में छिपी है। स्पष्ट है कि उनकी बौद्धिकता यह समझ पाने में पूर्णतः विफल रही थी कि इतनी विविधताएं किसी एक राष्ट्र की अवधारणा में किस प्रकार समाहित हो सकती है। औपनिवेशिक काल में प्रचलित यह अंग्रेजी धारणा (जो अभी भी समाप्त नहीं हो पाई है) कि अंग्रेजी राज ने किसी तरह से भारत नामक देश की रचना कर ली थी, उनकी अपनी 'सृजनशीलता के प्रति अभिमान' के साथ इतनी व्यापक विविधताओं और बहुलताओं को समाहित करने वाले किसी राष्ट्र के अस्तित्व में हो पाने की वास्तविकता को समझ पाने की उनकी विफलताओं की भी परिचायक रही है।"[1] विविधताओं के साथ-साथ भारतीय समाज में मौलिक एकता को परिभाषित करते हुए आर. कूपलैंड ने लिखा है, "भारत और विश्व के किसी अन्य देश में समानता के मुख्य बिंदु और मुख्य भिन्नता, भारतीय जीवन की विभिन्नता में निहित है। सदियों से आक्रमण एवं विजय के क्रम ने भारतीय समाज को यूरोप की तुलना में जाति, भाषा, मत एवं रीति-रिवाजों की जटिलता प्रदान की है। हाल तक भारत का घरेलू इतिहास विरोधी जातियों और शासकों के बीच संघर्ष की कहानी रहा है, फिर भी बाहरी दुनिया के लिए भारत एक विशाल देश है और इसके निवासी भारतीय। भारत में एकता लाने वाले कारक यूरोप की तुलना में अधिक मजबूत है।"[2]

प्रायः यह कहा जाता है कि किसी राष्ट्र की वास्तविक शक्ति का आकलन करने के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण तथ्य है, उस देश की सामाजिक स्थिति का अध्ययन। सर्वविदित सत्य है कि 'समाज की शक्ति' प्रत्येक व्यक्ति/वर्ग के अधिकारों की सुरक्षा एवं अधिकतम मानवीय संसाधनों का उपयोग कर विकास करने की क्षमता में निहित होती है, परंतु भारत की विविधता और बहुलता की समृद्ध परंपरा में जो सर्वाधिक नकारात्मक एवं दुःसाध्य तत्व है, वह है वर्ग एवं जाति प्रथा। यह प्रथा भारतीय समाज को हजारों समाज के रूप में प्रकट करती है। जाति संचरना की जटिल प्रकृति इस तथ्य से प्रमाणित हो जाती है कि वर्तमान आधुनिक युग में निरंतर अनुसंधानों के पश्चात् भी यह कहना कठिन है कि इस जटिल एवं परिवर्तनशील संस्था की उत्पत्ति एवं विकास में किन-किन कारकों का कितना योगदान रहा। सिंधु सभ्यता के समय को समाज की व्यापक जानकारी के अभाव में सामाजिक अध्ययन की विस्तृत विवेचना एवं अध्ययन वैदिक युग से ही संभव है।